

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं. 417

ISBN-978-93-84003-05-0

जम्बूस्वामी चरित

(संस्कृत, हिन्दी व अंग्रेजी भाषा सहित)

—लेखिका—

गणिनीप्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी

—अंग्रेजी अनुवाद—

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी

पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के 80वें जन्मजयंती महोत्सव वर्ष
(अमृत महोत्सव-2013-2014) के अन्तर्गत प्रकाशित



-प्रकाशक-

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान

जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र. फोन नं.- (01233) 280184, 280994

Website : www.jambudweep.org www.encyclopediaofjainism.com

E-mail : jambudweeptirth@gmail.com

Facebook : jaintirthjambudweep

प्रथम संस्करण

वीर नि. सं. 2540

मूल्य

1100 प्रतिष्ठा

फाल्गुन कृ. चतुर्दशी, 28 फरवरी 2014

20/-रु.

भगवान वासुपूज्य जन्मजयंती

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं बृहद् ग्रंथों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएँ भी प्रकाशित होती रहती हैं।

—: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत:—

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी
(दो बार डी.लिट. की मानद उपाधि से अलंकृत)

—: मार्गदर्शन:—

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी

(पीएच.डी. की मानद उपाधि से अलंकृत)

—: निर्देशक एवं सम्पादक:—

कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामीजी

—: प्रबंध सम्पादक:—

जीवन प्रकाश जैन

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

कम्पोजिंग - ज्ञानमती नेटवर्क, जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

विशारद कोर्स—साहित्य विषय की पाठ्यक्रम पुस्तक
गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती दिगम्बर जैन शिक्षा केन्द्र
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी का संक्षिप्त-परिचय

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

जन्मस्थान—टिकैतनगर (बाराबंकी) उ.प्र.

जन्मतिथि—आसोज सुदी 15 (शरदपूर्णिमा) वि. सं. 1991, (22 अक्टूबर सन् 1934)

जाति—अग्रवाल दि. जैन, गोत्र—गोयल, नाम—कु. मैना

माता-पिता—श्रीमती मोहिनी देवी एवं श्री छोटेलाल जैन

आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत—ई. सन् 1952, बाराबंकी में शरदपूर्णिमा के दिन

क्षुल्लिका दीक्षा—चैत्र कृ. 1, ई. सन् 1953 को महावीरजी अतिशय क्षेत्र (राज.) में आचार्यरत्न

श्री देशभूषण जी महाराज से। नाम-क्षुल्लिका वीरमती

आर्यिका दीक्षा—वैशाख कृ. 2, ई. सन् 1956 को माधोराजपुरा (राज.) में चारित्रचक्रवर्ती 108 आचार्य श्री शांतिसागर जी की परम्परा के प्रथम पट्टाधीश आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के करकमलों से।

साहित्यिक कृतित्व—अष्टसहस्री, समयसार, नियमसार, मूलाचार, कातंत्र-व्याकरण, षट्खण्डागम आदि ग्रंथों के अनुवाद/टीकाएं एवं लगभग 300 ग्रंथों की लेखिका।

डी. लिट्. की मानद उपाधि—सन् 1995 में अवध वि. वि. (फैजाबाद) द्वारा एवं तीर्थकर महावीर विश्वविद्यालय मुरादाबाद द्वारा 8 अप्रैल 2012 को "डी. लिट्." की मानद उपाधि से विभूषित।

तीर्थ निर्माण प्रेरणा—हस्तिनापुर में जंबूद्वीप, तेरहद्वीप, तीनलोक आदि रचनाओं के निर्माण, शाश्वत तीर्थ अयोध्या का विकास एवं जीर्णोद्धार, प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में तीर्थकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ का निर्माण, तीर्थकर जन्मभूमियों का विकास यथा-भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) में 'नंदावर्त महल' नामक तीर्थ निर्माण, भगवान पुष्पदंतनाथ की जन्मभूमि काकन्दी तीर्थ (निकट गोरखपुर-उ.प्र.) का विकास, भगवान पार्श्वनाथ केवलज्ञानभूमि अहिच्छत्र तीर्थ पर तीस चौबीसी मंदिर, हस्तिनापुर में जंबूद्वीप स्थल पर भगवान शान्तिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ की 31-31 फुट उत्तुंग खड्गासन प्रतिमा, मांगीतुंगी में निर्माणाधीन 108 फुट उत्तुंग भगवान ऋषभदेव की विशाल प्रतिमा, महावीर जी तीर्थ पर महावीर धाम में पंचबालयति मंदिर, शिर्डी में ज्ञानतीर्थ, स्मैदशिखर में आचार्य श्री शांतिसागर धाम इत्यादि।

महोत्सव प्रेरणा—पंचवर्षीय जंबूद्वीप महामहोत्सव, भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव, अयोध्या में भगवान ऋषभदेव महाकुंभ मस्तकाभिषेक, कुण्डलपुर महोत्सव, भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव, दिल्ली में कल्पद्रुम महामण्डलविधान का ऐतिहासिक आयोजन इत्यादि। विशेषरूप से 21 दिसम्बर 2008 को जंबूद्वीप स्थल पर विश्वशांति अहिंसा सम्मेलन का आयोजन हुआ, जिसका उद्घाटन भारत की तत्कालीन राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवीसिंह पाटील द्वारा किया गया।

शैक्षणिक प्रेरणा—'जैन गणित और त्रिलोक विज्ञान' पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन, इतिहासकार सम्मेलन, न्यायाधीश सम्मेलन एवं अन्य अनेक राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर के सेमिनार, ऑनलाइन जैन इनसाइक्लोपीडिया आदि।

रथ प्रवर्तन प्रेरणा—जंबूद्वीप ज्ञानज्योति (1982 से 1985), समवसरण श्रीविहार (1998 से 2002), महावीर ज्योति (2003-2004) का भारत भ्रमण।

इस प्रकार नित्य नूतन भावनाओं की जननी पूज्य माताजी चिरकाल तक इस वसुधा को सुशोभित करती रहें, यही मंगल कामना है।

पूज्य प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी का संक्षिप्त परिचय

-ब्र. कु. बीना जैन (संघस्थ)

नाम—प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी

दीक्षा पूर्व नाम—ब्र. कु. माधुरी शास्त्री

जन्मतिथि—18-5-1958 (ज्येष्ठ कृष्णा अमावस्या)

जन्मस्थान—टिकैतनगर (बाराबंकी) उ.प्र.

माता-पिता—श्रीमती मोहिनी देवी एवं श्री छोटेलाल जी जैन

भाई—चार (कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामी जी, कैलाशचंद, स्वप्रकाशचंद, सुभाषचंद)

बहन—आठ (गणिनी आर्यिका शिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी एवं आर्यिका श्री अभयमती माताजी सहित)

ब्रह्मचर्य व्रत—25 अक्टूबर 1969 को जयपुर में 2 वर्ष का ब्रह्मचर्य व्रत एवं सन् 1971, अजमेर में आजन्म ब्रह्मचर्य सुगंधदशमी को गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी से।

धार्मिक अध्ययन—1972 में सोलापुर से "शास्त्री" की उपाधि, 1973 में "विद्यावाचस्पति" की उपाधि।

द्वितीय एवं सप्तम प्रतिमा के व्रत—सन् 1981 एवं 1987 में गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी से।

आर्यिका दीक्षा—हस्तिनापुर में 13-8-1989, श्रावण शु. 11 को गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी से।

प्रज्ञाश्रमणी की उपाधि—1997 में चौबीस कल्पद्रुम महामण्डल विधान के पश्चात् राजधानी दिल्ली में पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा।

पीएच.डी. की मानद उपाधि—तीर्थकर महावीर विश्वविद्यालय मुरादाबाद द्वारा 8 अप्रैल 2012 को विश्वविद्यालय में।

साहित्यिक योगदान—चारित्रचन्द्रिका, तीर्थकर जन्मभूमि विधान, नवग्रहशांति विधान, भक्तामर विधान, समयसार विधान आदि 150 से अधिक पुस्तकों का लेखन, वर्तमान में पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा "षट्खण्डागम (प्राचीनतम जैन सूत्र ग्रंथ) एवं "भगवान ऋषभदेव चरितम्" की संस्कृत टीकाओं का हिन्दी अनुवाद कार्य, 'समयसार' छं 'कुन्दकुन्दमणिमाला' का हिन्दी पद्यानुवाद, भगवान महावीर स्तोत्र की संस्कृत एवं हिन्दी टीका, भगवान महावीर हिन्दी-अंग्रेजी शब्दकोष, जैन वर्षिप (अंग्रेजी में पूजा, भजन, बारहभावना आदि), भजन (लगभग 1000), पूजन, चालीसा, स्तोत्र इत्यादि लेखन की अद्भुत क्षमता, हिन्दी भाषा के साथ-साथ अंग्रेजी, संस्कृत आदि भाषाओं की सिद्धहस्त लेखिका, गणिनी ज्ञानमती गौरव ग्रंथ एवं भगवान पार्श्वनाथ तृतीय सहस्राब्दि ग्रंथ की प्रधान सम्पादिका। वर्तमान में 'इन्साइक्लोपीडिया ऑफ जैनियम डॉट कॉम' (ऑनलाइन जैन विश्वकोश) के सम्पादन में संलग्न।

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान-संक्षिप्त परिचय

—कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामीजी

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान की स्थापना पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से सन् 1972 में राजधानी दिल्ली में हुई थी। संस्थान का मुख्य कार्यालय सन् 1974से हस्तिनापुर में प्रारंभ हुआ। इस संस्थान के अन्तर्गत अनेक गतिविधियाँ हस्तिनापुर में तथा अन्यत्र चर रही हैं-

1. सन् 1972 से वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला के अन्तर्गत प्रतिवर्ष लाखों ग्रंथ प्रकाशित हो रहे हैं।
2. सन् 1974 से इस संस्थान के मुखपत्र के रूप में 'सम्यग्ज्ञान' हिन्दी मासिक पत्रिका का निरंतर प्रकाशन हो रहा है।
3. सन् 1974 से 1985 तक हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप रचना का निर्माण कार्य हुआ।
4. सन् 1974 से अब तक जम्बूद्वीप रचना के अतिरिक्त अनेक जिनमंदिरों का निर्माण हुआ है- कमल मंदिर, तीन मूर्ति मंदिर, ध्यान मंदिर, शांतिनाथ मंदिर, वासुपूज्य मंदिर, ॐ मंदिर, सहस्रकूट मंदिर, विद्यमान बीस तीर्थकर मंदिर, आदिनाथ मंदिर, अष्टापद मंदिर, ऋषभदेव कीर्तिस्तंभ, स्वर्णिम तेरहद्वीप रचना, तीन लोक रचना, नवग्रहशांति जिनमंदिर, चौबीस तीर्थकर मंदिर एवं श्री शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ की 31-31 फुट उत्तुंग प्रतिमाओं की स्थापना।
5. जम्बूद्वीप पुस्तकालय जिसमें लगभग 15000 ग्रंथ संग्रहीत हैं।
6. णमोकार महामंत्र बैंक जिसमें भक्तों द्वारा लिखकर भेजे गये करोड़ों णमोकार मंत्र जमा किये जाते हैं।
7. समय-समय पर शिक्षण-प्रशिक्षण शिविरों तथा संगोष्ठियों के आयोजन किये जाते हैं।
8. यात्रियों के शुद्ध भोजन के लिए राजा श्रेयांस भोजनालय का संचालन।
9. यात्रियों के ठहरने के लिए आधुनिक सुविधायुक्त डीलक्स प्लैट्स वाली कई धर्मशालाओं तथा कोठियों एवं बंगलों का निर्माण किया गया है।
10. जम्बूद्वीप परिक्रमा के लिए नौका विहार, ऐरावत हाथी तथा मनोरंजन हेतु मिनी ट्रेन, झूले आदि हैं।
11. तीर्थकर जन्मभूमियों की वंदना एवं धार्मिक फिल्मों का प्रदर्शन करने वाले थियेटर से समन्वित गणिनी ज्ञानमती हीरक जयंती एक्सप्रेस।
12. गणिनी ज्ञानमती दिगम्बर जैन पत्राचार परीक्षा केन्द्र का संचालन।
13. इंटरनेट पर जैनधर्म के इन्साइक्लोपीडिया (www.encyclopediaofjainism.com) का निर्माण।

दिल्ली, मेरठ, मुजफ्फरनगर, हरिद्वार, झाँसी, तिजारा आदि से जम्बूद्वीप स्थल तक आने के लिए दिन भर बसें मिलती रहती हैं।

दि. जैन त्रिलोक शोध संस्थान के अन्तर्गत भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार में भव्य नंदावर्त महल तीर्थ, प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में निर्मित तीर्थकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ तथा महावीर जी अतिशय क्षेत्र के महावीर धाम परिसर में निर्मित पंचबालयति दिगम्बर जैन मंदिर का संचालन होता है। वर्तमान में इस संस्थान के अन्तर्गत सम्मेशिखर जी तीर्थ पर "आचार्य श्री शांतिसागर धाम" का निर्माण प्रारंभ किया जा रहा है।

जम्बूद्वीप एवं अन्य रचनाओं के दर्शन हेतु हस्तिनापुर पधारकर आध्यात्मिक एवं भौतिक सुख की प्राप्ति करें।

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला के शिरोमणि संरक्षक

1. श्रीमती निर्मला जैन ध.प. स्व. श्री प्रेमचन्द्र जैन, तत्पुत्र प्रदीप कुमार जैन, खाबावली, दिल्ली-6।
2. श्रीमती सुमन जैन ध.प. श्री दिग्विजय सिंह जैन, इंदौर।
3. श्री महावीर प्रसाद जैन संघपति, जी-19, साऊथ एक्सटेन्शन, नई दिल्ली।
4. श्री महेन्द्र पाल हरेन्द्र कुमार जैन, सूरजमल विहार, दिल्ली।
5. श्रीमती मोहनी जैन ध.प. श्री सुनील जैन, प्रीत विहार, दिल्ली।
6. श्री देवेन्द्र कुमार जैन (धारुहेड़ा वाले) गुडगाँव (हरि.)।
7. श्रीमती शारदा रानी जैन ध.प. स्व. रिखबचंद जैन, बाहुबली एन्वलेव, दिल्ली-92।
8. डॉ. देवेन्द्र कुमार जैन, भोपाल (म.प्र.)
9. श्रीमती संगीता जैन ध.प. श्री संजीव कुमार जैन, शेरकोट (बिजनौर) उ.प्र.
10. श्री अनिल कुमार जैन, दरियागंज, दिल्ली
11. श्री बी.डी. मदनाइक, मुम्बई
12. श्री धनकुमार जैन, बाहुबली एन्वलेव, दिल्ली-92।
13. श्री जितेन्द्र कुमार जैन एवं श्रीमती सुनीता जैन कोटडिया, फ्लोरिडा, यू.एस.ए.
14. श्रीमती विमला देवी जैन ध.प. श्री ओमप्रकाश जैन, स्वालिक नगर, हरिद्वार (उत्तराखंड)।
15. श्री अमित जैन एवं संभव जैन सुपुत्र श्रीमती अनीता जैन ध.प. श्री मूलचंद जैन पाटनी, दिसपुर (कामरूप) आसाम।
16. श्रीमती अजित कुमारी जैन ध.प. श्री महेन्द्र कुमार जैन, ओबेदुल्लागंज (रायसेन) म.प्र.।
17. श्री नाभिकुमार जैन, जैन बुक डिपो, सी-4, पी.वी.आर. प्लाजा के पीछे, कॉस्ट प्लेस, नई दिल्ली।

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला के परम संरक्षक

1. श्री माँगीलाल बाबूलाल पहाड़े, हैदराबाद (आन्ध्र प्रदेश)।
2. डॉ. प्रकाशचन्द्र जैन, 792 विवेकानंदपुरी, सिविल लाइन, सीतापुर (उ.प्र.)।
3. श्री सुमत प्रकाश जैन, गज्जू कटरा, शाहदरा, दिल्ली।
4. श्री सुनील कुमार जैन, द्वारा-सुनील टैक्सटाईल्स, सरधना (मेरठ) उ.प्र.।
5. स्व. श्री प्रकाश चंद अमोलक चंद जैन सराफ, सनावद (म.प्र.)।
6. श्री प्रद्युम्न कुमार जवेरी, रोकडियालेन, बोरीवली (वेस्ट) मुंबई।
7. श्रीमती उर्मिला देवी ध.प. श्री कान्ती प्रसाद जैन, ऋषभ विहार, दिल्ली।
8. श्रीमती उषा जैन ध.प. श्री विमल प्रसाद जैन, ऋषभ विहार, दिल्ली।
9. श्री आनन्द प्रकाश जैन (सौरम वाले), गांधीनगर, दिल्ली।
10. श्रीमती सरिता जैन ध.प. श्री राजकुमार जैन, किदवई नगर, कानपुर।
11. स्व. श्रीमती कैलाशवती ध.प. श्री कैलाश चन्द्र जैन, तोपखाना बाजार, मेरठ।
12. श्री भानेन्द्र कुमार जैन, द्वारा-श्री विद्या जैन, भगत सिंह मार्ग, जयपुर।
13. श्री प्रदीप कुमार शान्तिलाल बिलाला, अनूपनगर, इंदौर, (म.प्र.)।
14. श्री सुरेशचंद पवन कुमार जैन, बाराबंकी (उ.प्र.)।
15. श्री नथमल पारसमल जैन, कलकत्ता-7।
16. श्रीमती स्व. शांताबाई ध.प. श्री कमलचंद जैन, सनावद (म.प्र.)।
17. श्री रूपचंद जैन कटारिया, दिल्ली
18. श्री आशु जैन, कालका जी, नई दिल्ली
19. श्री प्रद्युम्न कुमार जैन छोटी सा., श्री अमरचंद जैन सराफ, लखनऊ (उ.प्र.)
20. श्रीमती शशि जैन ध.प. श्री दिनेशचंद जैन, शिवालिक नगर, हरिद्वार (उत्तराखंड)।
21. श्रीमती आदर्श जैन ध.प. स्व. श्री अनन्तवीर्य जैन के सुपुत्र श्री मनोज कुमार जैन, मेरठ।
22. श्रीमती आरती जैन ध.प. श्री प्रकाशचंद जैन 'शीशे वाले', इलाहाबाद (उ.प्र.)।

गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती दिगम्बर जैन शिक्षा केन्द्र

-जीवन प्रकाश जैन, समन्वयक

सन् 1972 में परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान की स्थापना की गयी। इस संस्थान ने अपने इतिहास में अनेक तीर्थों के जीर्णोद्धार-विकास-ग्रंथों के प्रकाशन व राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर के अनेकानेक भव्य आयोजन आदि करके सदा जैन संस्कृति की प्रभावना की। इसी क्रम में वर्ष-2010 में संस्थान द्वारा गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती दिगम्बर जैन शिक्षा केन्द्र की स्थापना की गयी। जिसमें प्रतिवर्ष हजारों श्रावक-श्राविकाओं ने भाग लेकर ज्ञानार्जन किया एवं अपनी शिक्षा के अनुरूप प्रमाण-पत्र भी प्राप्त किये। पुनः वर्ष 2013 से विशेष उपलब्धिपूर्वक इस संस्थान द्वारा शिक्षा केन्द्र का संचालन तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय-मुरादाबाद के संयुक्त तत्वावधान में किया जा रहा है।

इस शिक्षा केन्द्र की स्थापना का मुख्य उद्देश्य जैन श्रावक-श्राविकाओं को धर्म के ज्ञान से अभिसंचित करना एवं उन्हें समाज में लब्ध प्रतिष्ठित करने हेतु विशेष सर्टिफिकेट/डिप्लोमा/डिग्री के माध्यम से सम्मानित करना है। इस शिक्षा केन्द्र के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के कोर्स संचालित किये गये हैं, जिसे नियमावली के अनुसार सभी श्रावक-श्राविकाएँ ज्ञानाराधना के लिए ज्वाइन कर सकते हैं। पूज्य माताजी का यह मार्मिक चिंतन है कि जैनधर्म के बंधुओं को सांसारिक व लौकिक ज्ञान के साथ ही जैनधर्म का ज्ञान अवश्यरूप से होना चाहिए, क्योंकि जैनधर्म के सिद्धान्तों को जानकर ही हमारी आत्मा विशुद्धि को प्राप्त करती है एवं धर्म के ये संस्कार आगामी अनेक भवों तक प्रत्येक आत्मा का मोक्षमार्ग प्रशस्त करते हुए उन्हें संसार भ्रमण से दूर करने में सहयोगी बनते हैं।

“ज्ञानामृतं भोजनं” अर्थात् ज्ञानरूपी अमृत ही आत्मा का भोजन है, यही इस शिक्षा केन्द्र का मूल उद्देश्य है। पाठकगण इन परीक्षा कोर्स में अभिरुचि के साथ भाग लेकर जैनधर्म के “सिद्धान्त, न्याय, व्याकरण, साहित्य व विधिविधान” से संदर्भित ज्ञान को प्राप्त करते हुए प्रवेशिका/मध्यमा/विशारद/शास्त्री/आचार्य के सर्टिफिकेट/डिप्लोमा/डिग्री आदि प्राप्त करके जैनधर्म की महती प्रभावना के साथ अपनी यशःकीर्ति को भी दिग्दिगंतव्यापी बनायें, ऐसी प्रेरणा है।

-संपर्क कार्यालय-

C/o दि. जैन त्रिलोक शोध संस्थान, जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

फोन नं.-01233-280184, मो.-09411025124

E-mail : onlineccjs@gmail.com, Website : www.jambudweep.org

भजन

रचयित्री- आर्यिका चन्दनामती

तर्ज-जिंदगी प्यार का गीत है.....

जन्म मानव का पाया है जो,

उसे सार्थक तो करना पड़ेगा।

वंश उत्तम ये पाया है जो,

मूल्यांकन तो करना पड़ेगा।।टेक.।।

कई जन्मों का पुण्य खिला, जिससे जिनधर्म उत्तम मिला।

गुरु का उपदेश ऐसा मिला, ज्ञान का दीप मन में जला।।

पाके सम्यक्त्व के रत्न को,

शिव डगर पे तो चलना पड़ेगा।।1।।

शुद्ध भोजन करोगे यदी, बुद्धि अच्छी बनेगी तभी।

छानकर जल पिओगे यदी, वाणी पावन बनेगी तभी।।

मन की शुद्धी के हेतू तुम्हें,

स्वच्छ भोजन तो करना पड़ेगा।।2।।

जाति औ कुल की रक्षा करो, शास्त्र औ गुरु की शिक्षा वरो।

दान-पूजन के योग्य बनो, आगे दीक्षा के योग्य बनो।।

शुद्ध खानदान रखना है यदि,

जाति में ब्याह करना पड़ेगा।।3।।

अपने बच्चों को संस्कार दो, पिण्ड शुद्धी का उपहार दो।

मुक्ति का मार्ग साकार हो, निज व पर का भी उपकार हो।।

“चन्दनामति” सुनो भाइयों!

तुम्हें कुल शुद्धि रखना पड़ेगा।।4।।





श्री जम्बूस्वामी चरित

प्रस्तुति-गणिनीप्रमुख आर्यिका ज्ञानमती

(संस्कृत भाषा को सरलतया समझने और उसके रसास्वादन के लिए अतीव सरल संस्कृत में यह कथानक दिया जा रहा है और साथ में इसका हिन्दी रूपांतर भी प्रस्तुत किया गया है)–

संस्कृत भाषा में—अस्ति आर्यखंडे मगधदेशस्य एकस्मिन् भागे राजगृही नाम नगरी। यत्र महाराजः श्रेणिको प्रजाः अनुशास्ति स्म, तस्य राज्ञी सम्यक्त्वादिगुणैर्मंडिता पतिधर्मपरायणा सती चेलना नामासीत्। एकदा तत्रैव विपुलाचलपर्वतस्य मस्तकस्योपरि त्रिजगद्गुरोः भगवतः श्री वर्धमानस्य समवसरां विराजते स्म। तत्र गत्वा जिनेन्द्रभगवतो वंदनानंतरे स्वसभायां स्थित्वा राजा श्रेणिकः श्री गौतमगणधरस्वामिनो मुखारविंदात् सद्धर्मोपदेशं शृण्वन्नासीत्, अकस्मात् एव आकाशमार्गात् कश्चित् तेजः पुंजोऽवतरन् दृष्टिगोचरोऽभूत्। आश्चर्यचकितो भूत्वा राजा श्रेणिको गौतमस्वामिनं पृच्छति स्म- भगवन्! कोऽयं दृश्यते? गणधरदेवोऽवोचत्- महाऋद्धिधारी विद्युन्माली नामा देवोऽयं चतसृभिर्महादेवीभिः सह परमधर्मानुरागात् श्री जिनेन्द्रदेववन्दनार्थं आगतोऽयं भव्यात्माद्यतनात् सप्तमदिवसे स्वर्गात् च्युत्वा अस्मिन्नेव नगरे मानवजन्मनि आगमिष्यति तथा तद्भवादेव मोक्षं यास्यति।

हिन्दी अनुवाद—इसी आर्यखंड के मगधदेश के एक भाग में राजगृही

नाम की नगरी है। वहाँ के राजा महाराज श्रेणिक प्रजा पर अनुशासन करते थे और उनकी रानी सम्यक्त्व आदि गुणों से सहित पतिधर्म-परायणा चेलना नाम की थी। किसी समय वहीं पर विपुलाचल पर्वत के मस्तक पर तीन जगत् के स्वामी श्री वर्धमान भगवान का समवसरण विराज रहा था। उस समवसरण में जाकर जिनेन्द्र भगवान की वंदना के अनंतर मनुष्यों के कोठे में बैठकर राजा श्रेणिक श्री गौतम स्वामी गणधर के मुख कमल से सद्धर्म को सुन रहे थे। अकस्मात् आकाशमार्ग से उतरता हुआ कोई तेजपुंज राजा को दृष्टिगोचर हुआ। आश्चर्यचकित होकर राजा ने श्री गौतम स्वामी से पूछा कि हे भगवन्! यह क्या दिख रहा है ? गणधर देव ने कहा कि—यह महाऋद्धिधारी विद्युन्माली नाम का देव अपनी चार देवियों सहित परमधर्म के अनुराग से श्री जिनेन्द्र भगवान की वंदना के लिए आ रहा है। यह भव्यात्मा आज से सातवें दिन स्वर्ग से च्युत होकर इसी नगर में मनुष्य जन्म में आवेगा तथा उसी भव से मोक्ष प्राप्त करेगा।

SHRI JAMBUSWAMI CHARITRA

A holy place named Rajgrihi is situated in Magadh region of Aryakhand, which is in the Bharat Kshetra of Jambudweep.

King Shrenik lived there and controlled all the public. His wife's name was Queen Chelna. She was very much beautiful not only by her face but also by the virtousness of right faith & loyalty to own husband etc.

Once upon a time the Samavasharan of 24th Tirthankar Lord Mahavir came there on the mountain of Vipulachal.

King Shrenik went there for bowing and paying reverence to Lord Mahavir. He was seated there in Samavasharan in the human group and started to listen the divine preaching (i.e. Divya Dhvani) of Tirthankar Prabhu.

Suddenly he saw a divine light, landing down from the sky. He asked from Gautam Gandhar Swami—O Lord! What I'm seeing this ?

Gautam Gandhar told Shrenik—This is Vidyunmali Dev, having a number of supernatural powers, is coming in Samavasharan with his four Devis for paying homage to Lord Mahavir.

He is a staunch devotee of Jinendra Bhagwan. After coming here, he will pay his hearty devotion and hearty wishes.

Further He told him that—O King! The specificity is of this Vidyunmali Dev is that this Bhavyatma deity will take birth in humanlife in this Rajgrihi Nagri coming from heaven after seventh day from today and will attain salvation from that birth only.

भावदेवब्राह्मणस्य दीक्षा ग्रहणं (भावदेव ब्राह्मण का दीक्षा ग्रहण)

संस्कृत भाषा में—अस्ति जंबूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डस्य मगधदेशे वर्धमाननाम नगरम्। तत्र यज्ञकुशलेषु ब्राह्मणेषु कश्चित् आर्यावसुः नाम ब्राह्मणोऽस्ति। तस्य साध्वी भार्या सोमशर्मा पतिधर्मपरायणासीत् तयोर्भावदेव-भवदेव नामानौ द्वौ पुत्रौ स्तः। तौ विद्याभ्यासात् वेदशास्त्रव्याकरणतर्कवैद्यक-छंदोनिमित्तसंगीतकाव्यालंकारेषु विषयेषु प्रावीण्यं अगच्छताम्, वादविवादेषु कुशलौ उभौ वयस्कौ जातौ।

पूर्वोपार्जितपापकर्मोदयेन अनयोः पिता आर्यावसुब्राह्मणो महकुष्टरोगेण पीडितो जातः, असौ गलितकुष्टवेदनां सोढुमक्षमः सततं मरणमिच्छति स्म, पत्युर्मरणानन्तरं तस्य भार्यापि शोकेन संतप्ता सती तस्यैव चितायां दग्ध्वा मृत्युमगच्छत्। पित्रोः वियोगेन भावदेव-भवदेवौ अत्यंतं दुःखं अनुभवन्तौ विलापं चक्रतुः। बांधवैः संबोध्य कथमपि शांतिमानीतौ, तदानीं शोकं त्यक्त्वा मातृपित्रोर्मरणक्रियां अकुरुतां।

तदनंतरं तस्मिन्नेव नगरे श्री सौधर्मनामाचार्याः समायाताः, ते सर्वपरिग्रहविमुक्ता जातजाता दिगंबरा गुप्तिसमितिधर्मैयुक्ताः शास्त्रज्ञाः परमदयालो अष्टाभिर्मुनिभिः राजन्ते स्म। गुरुणां दर्शनं कृत्वा भावदेवोऽपि उपदेशं आकर्ण्य भवभ्रमणात् भीतः सन् निर्विण्णहृदयः सौधर्माचार्यमप्रार्थयत् हे स्वामिन्! संसारसमुद्रे निमज्जंतं मां पाहि, पुनीहि कृपया मह्यं जैनीश्वरी दीक्षां प्रदत्स्व। भावदेवस्य

वचनं श्रुत्वा विरक्तोऽयमिति ज्ञात्वा च गुरुदेवाः सद्धर्मात्मैः संतर्प्य तभ्यं दीक्षां ददति स्म। असौ सर्वसावद्ययोगविरतः सन् स्वसंयमं पालयन् गुरुभिः सह विहरति स्म, तपस्वी, विनयी, तत्त्वाभ्यासी, स्वाध्यायप्रियः स्वशुद्धात्मानं ध्यायति, कदाचित् धन्योऽस्मि, कृतार्थोऽस्मि, पुण्योऽस्मि अनादितो लब्धं उत्तमं जिनधर्मं लब्ध्वा संसारसागरं तरिष्यामि त्वरमिति परमं संतोषं अगच्छत्।

हिन्दी अनुवाद—जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र के आर्यखंड में मगधदेश में वर्धमान नाम का नगर है। वहाँ पर यज्ञ क्रियाओं में कुशल अनेकों ब्राह्मण रहते थे, उनमें आर्यावसु नाम का एक ब्राह्मण रहता था, उसकी सोमशर्मा नाम की भार्या थी जो कि साध्वी और पतिव्रता धर्म परायणा थी। इन दोनों के भावदेव और भवदेव नाम के दो पुत्र थे। ये दोनों विद्या अभ्यास करके वेदशास्त्र, व्याकरण, तर्क, वैद्यक, छंद, निमित्त, संगीत, काव्य और अलंकार आदिविषयों में प्रवीणता को प्राप्त हो चुके थे और वादविवादों में भी कुशल, यौवन अवस्था को प्राप्त हो चुके थे।

पूर्वोपार्जित पापकर्म के उदय से इनके पिता आर्यावसु ब्राह्मण महाकुष्ट रोग से पीड़ित हो गये, वे गलित कुष्ट की वेदना को सहन करने में असमर्थ होते हुए हमेशा मरण चाहने लगे। पति मृत्यु के बाद उनकी भार्या भी शोक से संतप्त होती हुई पति की चिता में ही जलकर मर गई। माता-पिता के वियोग से भावदेव-भवदेव दोनों ही भाई अत्यन्त दुःख का अनुभव करते हुए विलाप करने लगे। बंधु-बांधवों ने इनको समझा-बुझाकर जैसे-तैसे शांति प्राप्ति कराई, तब इन दोनों ने शोक को छोड़कर माता-पिता की मरण क्रिया को पूर्ण किया।

अनंतर उसी नगर में श्री सौधर्म नाम के आचार्य पधारे, वे संपूर्ण परिग्रह से रहित, जात-रूपधारी—दिगम्बर, गुप्ति, समिति और दस धर्मों से युक्त शास्त्रपारंगत परमदयालु अपने आठ मुनियों के संघ सहित वहाँ ठहर गये। भावदेव ब्राह्मण भी उन गुरुओं के दर्शन को करके और उनके उपदेश को सुनकर भवभ्रमण से भयभीत होता हुआ विरक्तमना होकर श्री सौधर्म आचार्य से प्रार्थना करने लगा कि हे स्वामिन्! संसार समुद्र में डूबते हुए मेरी रक्षा करो और मुझे पवित्र करो और कृपा करके मुझे जैनेश्वरी दीक्षा प्रदान

करो। भावदेव के वचन को सुनकर और 'यह विरक्त हो चुका है' ऐसा समझकर सद्धर्मरूपी अमृत से उसे संतर्पित करके दीक्षा दे दी। ये भावदेव भी सर्वसावधयोग – पापयोग से विरत होते हुए और अपने संयम का पालन करते हुए गुरुदेव के साथ विहार करने लगे, ये साधु तपस्वी, विनयी, तत्त्वों का अभ्यास करने वाले, स्वाध्याय के प्रेमी, अपनी शुद्धात्मा का ध्यान करते थे। वे कदाचित् यह सोचते थे कि "मैं धन्य हो गया हूँ, कृतकृत्य हो गया हूँ, पुण्यशाली हो गया हूँ जिससे मैं अनादि काल से नहीं प्राप्त हुए उत्तम जिनधर्म को प्राप्त करके संसार समुद्र को शीघ्र ही पार करूँगा।" इस प्रकार से वे साधु परम संतोष को प्राप्त हो गये थे।

Initiation of Bhaavdev (Previous Birth of Jambuswami)

A town named Vardhman is situated in Magadh region of Aryakhand of Bharat Kshetra of Jambudweep. Many Brahmans, proficient in religious rituals, lived there. In them, there was a Brahman named Aryavas. His wife's name was Somsharma, who was a noble and religious lady, fully loyal to her husband. The couple had two sons named Bhaavdev and Bhavdev. Both of the brothers gained the knowledge of many Vedic Granthas and became expert in Sanskrit Grammer, *Chhand*, *Alankar*, music, poetry etc. They were very efficient in argumentation. Gradually they attained youthhood.

Once their father Aryavas Brahman had the disease of Leprosy due to some sinful Karma. All the time he wanted to die because he could not bear the painful experience of his disease. At last, he died one day. After his death, his wife felt a lot of sorrow and died with her husband in his funeral by burning herself.

Bhaavdev and Bhavdev cried very much seeing the death of

their parents. Their relatives convinced them with sympathy, then both of them performed the last rites of their parents.

After sometime Shri Saudharmacharya came there. He was a great saint with Digambar *Mudra*, *Guptis*, *Samitis*, ten Dharmas etc. along with full possessionlessness, learnedness in Digambar Jain treatises & compassion. He stayed there with his sangh of eight munis.

Bhaavdev Brahman came there for their darshan and listening to their preachings.

He became afraid of worldly miseries and prayed to the Acharya—

O Swami! Please defend me from the troubles of the world by giving me pious *Jaineshwari Deeksha*.

Acharya dev became convinced with the spirits of Bhaavdev and initiated him as a Digambar Muni. After initiation Bhaavdev also started great penance with his preceptor. He used to practice Jain Philosophical principles deeply. Time to time, he used to meditate on his own soul.

In this stage he was fully contented and felt himself most fortunate, because he was confident that I will cross the ocean of worldly miseries now very soon. Thus he was immersed in the meditation of his soul with great happiness.

भवदेवब्राह्मणस्य दीक्षा ग्रहणं (भवदेव ब्राह्मण का दीक्षा ग्रहण)

संस्कृत भाषा में—अथ कदाचित् विहरन् सन् ससंघः श्री सौधर्माचार्यवर्यः भावदेवमुनिना सार्धं तत्रैव वर्द्धमानपुरे आगतः। तदानीं विशुद्धबुद्धिधारी भावदेवमुनिः स्वानुजं भावदेवं स्मरतिस्म, असौ नगरे विख्यातो विषयासक्तः एकांतमतानुयायी स्वहितं नाज्ञासीत्। करुणार्द्रमनाः भावदेवमुनिः तस्य संबोधनार्थं गुरोरनुज्ञां गृहीत्वा संघात् निर्गत्य भवदेवगृहे आगत्याहारं लब्धवान्। अनंतरं धर्माभ्यासैः

परितर्प्य स्वस्थानं प्रति आगच्छत्, भवदेवोऽपि विनयेन् अग्रजं अनुः व्रजन् मध्ये मार्गतः प्रत्यागतुं उत्सुको नवोढावधूं नागवसुं स्मारं-स्मारं व्याकुलितो जातः तस्य करे विवाहस्य कंकणं आसीत्। परन्तु अग्रजस्याज्ञामंतरेण कथं गच्छेयम्? इति संचिंत्य तमनु संघे समायातः। इमौ समायतौ विलोक्य सर्वे मुनयोऽवोचन् हे भावदेवमुने! त्वं धन्योऽसि यत् स्वानुजं आनीतवान्, भावदेवेनापि उक्तं मुमुक्षुरयं, दीयतां दीक्षामस्मै। भवदेवोपि मनसि विचारयति यदहं नवविवाहिच्छ्रुं त्यजामि तर्हि मम हृदि शांतिर्नास्ति, यदि दीक्षां न गृह्णामि तर्हि अग्रजस्य गौरवहानिर्भविष्यति, किं करोमि ? क्षणं मनसि वितर्क्य पुनः दीक्षामेवाग्रहीत्, तथापि सशल्योऽयं स्मराग्निना दह्यमानोऽहर्निशं स्वपत्न्या अस्मार्त्। गुरुजनैः सार्धं ध्यानाध्ययनतपोव्रतेषु अपि सदैव संलग्नो दृश्यते स्म।

हिन्दी अनुवाद—कदाचित् विहार करते हुए अपने संघ सहित सौधर्माचार्यवर्य भावदेव मुनि के साथ-साथ उसी वर्द्धमान नगर में पधारे। उस समय विशुद्ध बुद्धिधारी भावदेव मुनि ने अपने छोटे भाई भवदेव का स्मरण किया। वह उस नगर में प्रसिद्ध था विषयासक्त, एकांत मतानुयायी अपने हित को नहीं समझता था। अत्यन्त करुणा से प्रेरित होकर भावदेव मुनि ने उसके संबोधन के लिए गुरु से आज्ञा ले ली और संघ से चलकर भवदेव के यहाँ आकर आहार ग्रहण किया। अनंतर धर्मरूपी अमृत का पान कराकर वे संघ में चल पड़े, तब वह भवदेव भी विनयवृत्ति से गुरु के साथ-साथ चलने लगा, मार्ग से वापस आना चाहता हुआ वह बार-बार अपनी नव विवाहित स्त्री का स्मरण कर रहा था, उसके हाथ में विवाह का कंकण बंधा हुआ था, अर्थात् उसी दिन उसका विवाह हुआ था। किन्तु भावदेव मुनि मौन से चले जा रहे थे उनकी आज्ञा न मिलने से मैं घर वापस कैसे जाऊँ? ऐसा सोचकर बस उन्हीं के साथ संघ तक आ गया। तब मुनियों ने कहा कि हे भावदेव मुनि! तुम धन्य हो जो भाई को साथ ले आये हो, भावदेव ने भी कहा कि हे भगवन्! यह मुमुक्षु है। उसे दीक्षा दे दीजिए। भवदेव मन में सोचने लगा कि मैं क्या करूँ, यदि घर नहीं जाकर नव विवाहित पत्नी का त्याग करता हूँ, तो मुझे आर्तध्यान बना रहेगा और यदि दीक्षा नहीं लेता हूँ, तो भाई का गौरव घटेगा। अनेक प्रकार से ऊहापोह कर करके उसने दीक्षा ही ले ली। वह शल्य सहित

होता हुआ काम अग्नि से जलता हुआ अपनी पत्नी का प्रतिदिन स्मरण करता रहता था। फिर भी साधुओं के साथ ध्यान अध्ययन तप व्रत आदि में भी संलग्न हो रहा था।

Initiation of Bhavdev

Once Sautharmacharya reached that Vardhman Nagar with his Sangh and with Bhaavdev Muniraj during Vihar (on foot journey). There Bhaavdev Muni remembered his younger brother Bhavdev. Bhavdev was famous in that town for his indulgement in sensual pleasures and he was devoid of the true religion. He was unaware of the real upliftment of the soul.

With a lot of compassion for Bhavdev, Bhaavdev Muni got the permission from the Acharya, came to the home of Bhavdev and took the meals (*Ahar*). After the *Ahar*, Muni Shri Bhaavdev preached Bhavdev with the nectar of religion and started his return to the Sangh. At that time Bhavdev also accompanied the Muniraj with hearty regard.

As a matter of fact, Bhavdev was remembering his newly wed wife in his heart and wanted to return, because he was married on that day only. But as Bhaavdev Muni was proceeding with complete silence, Bhavdev could not get his permission to return. Ultimately both of them reached in the Sangh.

Seeing this, Munis of the Sangh praised Bhaavdev Muniraj for bringing his younger brother in the Sangh. Bhaavdev Muniraj told his preceptor (Acharya), 'Gurudev! Please initiate my brother also as a Digambar Muni, because he is eager to proceed on the path of salvation'.

Bhavdev was very perplexed on this sudden incident because he was thinking in his heart that if I leave my newly-wed wife, then I will remain disturbed always and if I do-not accept

initiation, the dignity of my brother will be lowered down.

Thinking over these facts again and again, he accepted Muni deeksha. However, he used to remember his wife all the time with the inclination towards sensual pleasures.

Even then, he used to perform daily rites-meditation, studying religious scriptures, austerity etc. of his initiated life with all other Munis of the Sangh.

भवदेवमुनेः व्रतेषु स्थिरीकरणं

(भवदेव मुनि का व्रत में स्थिरीकरण)

संस्कृत भाषा में—कतिपयमासानंतरं संघसहितो सौधर्मो गणी विहरन् सन् तत्रैव वर्धमाननगरे समागत्य नगरात् बहिः उद्याने स्थितः। केचित् मुनयो ध्याने स्थित्वा तपश्चर्यां कुर्वन्त आसन्, केचित् मुनयः स्वाध्याये निरता बभूवुः। तदानीं भवदेवमुनिः आहारछद्मात् नगरे प्रविष्टः मार्गं गच्छन् सन् एकं उन्नतं जिनमंदिरमपश्यत् तदा मंदिरस्यांतः प्रविश्य त्रिःप्रदक्षिणीकृत्य भक्तिभावेन जिनेन्द्रप्रतिमां अनंसीत्। तत्रैव चैत्यालये काचित् आर्यिका आसीत् सा मुनिराजं दृष्ट्वा नमस्कृत्य रत्नत्रयकुशलं अपृच्छत्। मुनिरपि आर्यिकायाः कुशलं पृच्छ्वा पृच्छति स्म।

हे आर्ये! अत्र नगरे भवदेवभवदेवनामानौ उभौ सहोदरौ आस्तां, कनिष्ठस्य भवदेवस्य नवोढा भार्या क्वास्ते?

तदानीं आर्यिकया मनसि चिंतितं अयमेवभवदेवमुनिः दृश्यते, स्खलितमनाः समायातः, भीता सती सा सर्वं पूर्ववृत्तं निवेद्य बहुभिर्दृष्टांतै संबोध्य स्थितीकरणं कृत्वा वदति स्म। हे मुने! भवदेवस्य पत्नी सा एवाहं भवदेवस्य मुनिदीक्षानंतरं स्वद्रव्येण एतज्जिनमंदिरं निर्माप्य पंचकल्याणप्रतिष्ठां कारयित्वा र्यिका जाताहम्।

एतत् श्रुत्वा भवदेवस्य मनसि विषयभोगात् महती ग्लानिः संजाता, तां आर्यिकां पुनः पुनः स्तुत्वासौ व्याघुट्य स्वसंघे प्रत्यागतः।

हिन्दी अनुवाद—कुछ महीने निकल जाने के बाद वे ही सौधर्म आचार्य संघ सहित विहार करते हुए उसी वर्धमान नगर के बाहर बगीचे में ठहर गये। कुछ मुनिगण ध्यान में लीन होकर तपश्चर्या करने लगे और कुछ मुनि अपने

स्वाध्याय में तत्पर हो गये। उसी समय भवदेव मुनि आहार के बहाने नगर में घुसे। जाते हुए मार्ग में एक अत्युन्नत भव्य जिनमंदिर देखा। तब मंदिर में जाकर तीन प्रदक्षिणा देकर भक्तिभावपूर्वक जिनेन्द्र प्रतिमा को नमस्कार किया। उसी चैत्यालय में एक आर्यिका रहती थीं उन्होंने आकर मुनिराज को नमस्कार करके रत्नत्रय की कुशल पूछी, मुनिराज भी आर्यिका की कुशल पूछकर बोले कि हे आर्ये! इसी नगर में भवदेव भवदेव नाम के दो सगे भाई रहते हैं। उनमें से छोटे भाई की नव विवाहिता पत्नी कहाँ है ? आपको मालूम है क्या ?

इतना सुनते ही वह आर्यिका समझ गई कि ये ही भवदेव मुनि हैं, जो कि स्खलित होकर आ गये हैं। उस समय वह बहुत ही घबरा गई और सभी पूर्व वृत्तान्त को बतलाकर अनेकों दृष्टांतों से मुनि को संबोधित करते हुए उसका स्थितीकरण करके बोली हे मुनिराज! वह भवदेव की पत्नी मैं ही हूँ। भवदेव की मुनि दीक्षा के अनंतर अपने धन से इस जिनमंदिर का निर्माण कराके पंचकल्याणक प्रतिष्ठा कराकर मैंने संसार समुद्र से पार होने के लिए यह आर्यिका दीक्षा ले ली है।

इतना सुनकर भवदेव के मन में विषय भोगों के प्रति बहुत ही ग्लानि उत्पन्न हो गई। उस आर्यिका की बार-बार स्तुति करते हुए वे मुनिराज वहाँ से चलकर वापस संघ में आ गये।

Re-steadiness of Bhavdev Muni in His Vrat

After some months Saudharmacharya came back in the garden of Vardhman Nagar. Some Munis of the Sangh started penance being engrossed into meditation and some Munis became indulged in Swadhyaya. At that time, Bhavdev Muni reached that nagar with the pretention of taking meals (Ahar). He saw a beautiful temple in the way to the village. He went into the temple and took three rounds of the vedi (Altar) with Jin-idol.

An Aryika Mataji was living in that Chaityalaya. She came for the darshan of Muniraj and after bowing down into his feet,

she asked about his well-being. Muniraj also asked her well being and asked her, 'Mataji! Do you know that two brothers Bhaavdev and Bhavdev used to live in this village, if you can tell that where is the wife of the younger brother Bhavdev ?'

Listening to this, Aryika Mataji clearly understood that Muni was Bhavdev, who had come there with unstability towards his path of renunciation. Seeing his condition, firstly she became anxious and then addressed him to become stable on his chosen path of initiation by a number of examples. She later disclosed that infact she was his wife.

She told him-'When you left me, I utilized all your wealth in the construction of a Jain temple and organized the Panchkalyanak Pratishtha. After that I took Aryika Deeksha for getting rid of the worldly transmigration.'

Listening to this Bhavdev Muniraj became fully detached from the worldly passions. He greeted Aryika Mataji again & again and came back to his Sangh.

भवदेवमुनेः पुनर्दीक्षाग्रहणम् (भवदेव मुनि का पुनः दीक्षा ग्रहण)

संस्कृत भाषा में—अथानंतरं भवदेवमुनिना स्वगुरोः सौधर्माचार्यवर्यस्य सकाशे सविनयं सर्वं वृत्तं आलोचितं। तदानीं गुरुरपि तस्य पूर्वदीक्षाछेदं कृत्वा पुनरपि संयमे तं प्रस्थापितवान्। ततः प्रभृत्यसौ मुनिर्भावलिङ्गी श्रमणः सन् भावविशुद्ध्या साक्षात् विरागमूर्तिर्जितेन्द्रियो जातः।

अयं धीरवीरः स्वशरीरेऽपि निःस्पृहः, किन्तु मुक्तिसंगमे सस्पृह आसीत्। क्षुत्पिपासादिपरिषहाणां परमसमभावतः सहिष्णुः सुखदुःखयोः शत्रुमित्रयोः लाभालाभयोर्जीवितमरणयोर्निर्दास्तुत्योश्च समपरिणामो निर्विकारो बुद्धिमान् संजातः। इत्थं तपश्चरंतौ बहूनि वर्षाण्यतीत्य अंतकाले भावदेवभवदेव नामानौ उभौ अपि मुनिवरौ पंडितमरणेन प्राणान् त्यक्त्वा तृतीयसनत्कुमार स्वर्गं देवौ

अजनिषातां। सम्यक्त्वव्रतमाहात्म्येन चिरकालं तत्र दिव्यसुखान्यनुभवेताम्।

हिन्दी अनुवाद—अनंतर आर्यिका द्वारा सम्बोधन को प्राप्त हुए भवदेव मुनिराज ने अपने गुरु सौधर्म आचार्यवर्य के पास जाकर विनय सहित सर्व वृत्तांत (दोषों) की आलोचना की। उस समय गुरु ने भी उनके पूर्व की दीक्षा का छेद करके पुनरपि उन्हें संयम में स्थापित किया। अर्थात् पुनर्दीक्षा प्रदान की। तब से ये मुनिराज भावलिङ्गी श्रमण बन गये और भावों की विशुद्धि से साक्षात् वैराग्यमूर्ति इंद्रिय विजेता हो गये। ये धीर, वीर मुनिराज अपने शरीर में भी निस्पृह थे किन्तु मुक्ति लक्ष्मी के संगम में स्पृहावान-इच्छुक थे। क्षुधा, पिपासा, शीत, उष्ण आदि परीषहों को परम साम्य भाव से सहन करने वाले थे। सुख, दुःख, शत्रु, मित्र, लाभ, अलाभ, जीवन, मरण और निंदा, स्तुति में समभाव धारण करते हुए निर्विकारी और बुद्धिमान हो गये थे। इस प्रकार तपश्चरण करते हुए बहुत से वर्षों को बिताकर अंत समय में भावदेव-भवदेव नाम के ये दोनों मुनिराज पंडित मरण से प्राणों का त्याग करके तीसरे सनत्कुमार स्वर्ग में देव हो गये। वहाँ पर सम्यक्त्व और व्रतों के महात्म्य से चिरकाल तक दिव्य सुखों का अनुभव करते रहे हैं।

Re-initiation of Bhavdev Muni

After listening to the preachings of Aryika Mataji, Bhavdev Muniraj went to his preceptor and criticized himself. Saudharmacharya understood all the condition and gave him *deeksha* again. From then, Bhavdev became *Bhaavlingi* Muniraj (real saint) and became the winner of all the sensual pleasures.

Bhaavlingi Bhavdev Muni was fully detached from his body but fully attached with *Mukti lakshmi* i.e. the salvation.

He was bearing all the sufferings of hunger, thirst, cold and heat etc. by great patience. He had become more & more efficient in maintaining equilibrium in all conditions of happiness & sorrow, enemy & friend, life & death, profit & loss and

criticism & appreciation etc. Doing penance in such a way for a number of years, both of these Muniraj-Bhaavdev & Bhavdev performed *Pandit-Maran* (holy death) at the end of life and became deities in the third Sanatkumar heaven. They experienced divine pleasures there for long times as the result of *Samyaktva* & penance of previous birth.

भावदेवभवदेवयोः पुनर्मनुष्यजन्मलाभः

(भावदेव एवं भवदेव को पुनः मनुष्य जन्म की प्राप्ति)

संस्कृत भाषा में—अथ भावदेवभवदेवचरदेवौ तृतीयस्वर्गस्य सप्तसागर-पर्यंतं आयुः समाप्तिमानीतवन्तौ। तन्मध्ये यदा षण्मासमायुरवशिष्टं तदानीं तत्र कल्पवृक्षस्य दीप्तिमंदादिनानानिमित्तेन स्वर्गात्पतनं अवबुद्ध्य तौ शोकात्तौ संजातौ। तत्समये अन्ये देवादय आगत्य तौ समवबोधयन्। ततो धर्मबुद्ध्या उभौ अपि देवौ जिनमंदिरे गत्वा भावविशुद्ध्या जिनपूजां कृत्वातिष्ठतां अनंतरं अंतकालमासन्नं ज्ञात्वा कल्पवृक्षस्याधः उपविश्य समाहितमनसौ प्रतिमायोगं गृहीत्वा आत्मध्याने निमग्नौ अजायतां, महामंत्रं स्मरं स्मरं प्राणान् त्यक्त्वा मर्त्यलोके समायातौ। क्व समायातौ ?

जंबूद्वीपस्य महामेरुपर्वतस्य पूर्वविदेहक्षेत्रे चतुर्थकाल एव सर्वदा वर्तते तत्र शाश्वतकर्मभूमिरचनास्ति। तत्र पुष्कलावतीनामदेशः, तद्देशे पुण्डरीकिणीनाम् महानगरी प्राकारादिभिः राजते। तत्र विदेहक्षेत्रे सदैव जिनधर्मानुवासिता जनाः श्रावकधर्ममनुपाल्य मुनिधर्मं समाचरन्तः कर्मक्षयं कृत्वा विदेहा भवन्तीति 'विदेह' नामसार्थकमेव। अस्या वज्रदंतराजा तस्य महाराज्ञी यशोधना। भावदेवचरदेवः स्वर्गात्प्रच्युत्य तयोः सागरचंद्रनामा पुत्रो बभूव।

तत्रैव पुष्कलावतीदेशे वीतशोकापुरी नाम द्वितीया नगरी। तस्या शासको महापद्मचक्रवर्ती आसीत्। तस्य षण्णवतिसहस्राणि राज्यः संति, तासु मध्ये एका वनमाला राज्ञी पुण्यशालिनी बभूव। असौ भवदेवचरदेवो स्वर्गादागत्य अस्या वनमालायां शिवकुमार नाम सुपुत्रो जातः अयं शिवकुमारो पित्रौ सुखं वर्द्धयन् स्वयं च चन्द्रकलावत् वर्धमानो राजतेस्म। सर्वजनानां प्रियः अंतः पुरे

क्रीडन् सन् शैशवमतीत्य युवा बभूव।

हिन्दी अनुवाद—पुनः भावदेव-भवदेवचर उन दोनों देवों ने तृतीय स्वर्ग की सात सागर पर्यंत आयु को समाप्त कर दिया, उसमें जब षट्मासपर्यंत आयु अवशिष्ट रह गई थी, तब कल्पवृक्ष की ज्योति मंद पड़ गई, आदि अनेकों निमित्तों से स्वर्ग से अपना पतन होना जान अत्यन्त शोक करने लगे। उस समय अन्य देवों ने आकर उन दोनों देवों को खूब ही धर्मोपदेशपूर्वक समझाया। तब धर्मबुद्धि से वे दोनों ही देव जिनमंदिर में जाकर भावशुद्धिपूर्वक जिनपूजा करते हुए वहीं ठहरे, अनंतर अंत समय को निकट जानकर कल्पवृक्ष के नीचे बैठकर समाधान चित्त हुए प्रतिमायोग को ग्रहण करके आत्मध्यान में लीन हो गये और महामंत्र का बार-बार स्मरण करते हुए प्राणों का त्याग करके मध्यलोक में आ गये।

कहाँ पर आये ?—जम्बूद्वीप के महामेरु पर्वत के पूर्व विदेह क्षेत्र में सदा चतुर्थ काल ही रहता है, वहाँ शाश्वत कर्मभूमि की व्यवस्था है। उस पूर्व विदेह में पुष्कलावती नाम का एक देश है, उसमें पुण्डरीकणी नाम की नगरी है, जो कि परकोटे आदि से सुशोभित है। उस विदेह की नगरी में सदैव जिनधर्म का पालन करते हुए लोग श्रावक धर्म का पालन करके मुनि हो जाते हैं और कर्मों का नाश करके देहरहित विदेह (सिद्ध) हो जाते हैं इसलिए उनका 'विदेह' यह नाम सार्थक ही है।

इस नगरी के वज्रदंत महाराज की रानी का नाम यशोधना था। भावदेव का जीव, देव स्वर्ग से च्युत होकर उन दोनों के सागरचन्द्र नाम का पुत्र हो गया।

उसी पुष्कलावती देश में वीतशोका नाम की दूसरी नगरी है। उसके शासक महापद्मचक्रवर्ती थे, उनके छ्यानवे हजार रानियाँ थीं, उनमें से एक वनमाला रानी महापुण्यशालिनी थी। भवदेव का जीव देव स्वर्ग से च्युत होकर इस वनमाला के शिवकुमार नाम का पुत्र हो गया। यह शिवकुमार माता-पिता के सुख को बढ़ाता हुआ स्वयं चन्द्रमा की कला के समान बढ़ता हुआ शोभित हो रहा था। सभी जनों का प्रिय यह बालक क्रम से अंतःपुर में खेलता हुआ शैशव अवस्था को समाप्त कर युवा हो गया।

Bhaavdev & Bhavdev Again born As Humanbeings

Both the deities (souls of Bhaavdev & Bhavdev) completed the lifetime of 7 *sagars* of the third heaven. However when six months remained in completion of their divine life, the illumination by *kalpavriksha* became down and by a number of other symptoms they knew about their separation from the divine luxuries of the heaven and so they became distressed a lot. At that time, other deities came and preached them with the nectar of religion.

Then, both of them, being consoled with the preachings, came to the Jin-Mandir, performed the worship with inner feelings & devotion and later when they knew about their end-time, they became seated under the Kalpa-Vriksha and accepted *Pratimayog* (full stability) and became immersed into meditation. Remembering the 'Mahamantra' again & again they took their last breath and were reborn in the Middle Universe as human beings.

Where they were born ? The fourth *Kal* always remains in the east *Videh kshetra* of the Sumeru mountain of Jambudweep and there is eternal *Karma-bhumi* (Land of Action) arrangement. A country named Pushkalavati is situated there and the city *Pundarikini* is present in this country. Here the people follow *Shravak dharma* i.e. the Jain religion of house-holders and then become *Muni* to get salvation.

The name of the queen of this country was Yashodhana, the wife of the king Vajradanta Maharaj. The soul of Bhaavdev became the son of this pair after coming from the heaven. His name was Sagarchandra, who later became Muniraj.

There is another nagari 'Veetshoka' in this country Pushkalavati. The emperor of this country was Mahapadma

Chakravarti. He had 96000 queens. Vanmala was one of them. She was very fortunate. The *jeev* (soul) of Bhavdev became the son of Vanmala. He was named as Shivkumar. The child was growing up with increasing the happiness of his parents and all others. Gradually, he became young passing his childhood pleasantly.

शिवकुमारस्यासिधारा व्रतानुष्ठानं

(शिवकुमार का असिधारा व्रत)

संस्कृत भाषा में—अथ कदाचित् राजप्रासादस्य पार्श्वे कस्यचित् श्रेष्ठिनो गृहे चारणद्विविभूषितः श्रुतकेवली सागरचन्द्र मुनिराज आहारार्थं समायातः, श्रेष्ठी शुद्धभावेन नवकोटि विशुद्ध्या प्रासुकाहारं मुनिये अदात्। ऋद्धिधारिणो मुनेर्दानमाहात्म्यात् श्रेष्ठिनः प्रांगणे गगनात् रत्नवृष्ट्यादिपंचाश्चर्यं बभूव। तदानीं जयजयकाररवैः कोलाहले जाते सति राजप्रसादे स्थितः चक्रीपुत्रः शिवकुमारः कौतुकपूर्वकं बहिः अपश्यत्।

अहो! कस्मिंश्चिद् भवे अस्य मुनेर्दर्शनं कृतमेव मया, इति मनसि जाते सति तत्क्षणमेव तस्य जातिस्मरोऽभवत्। पूर्वभवस्याग्रजोऽयमिति निश्चित्य तत्समीपे आगत्य स्नेहातिरेकान्मूर्छितो जातः। एतत् श्रुत्वा स्वयं चक्रवर्ती तत्रास्य पुत्रमोहात् मुग्धः सन् अत्यर्थं विललाप। पितुः शोकं निरीक्ष्य निर्विण्णोऽपि कुमारः कथमपि गृहे निवासं स्वीचकार। अयं शुद्धसम्यग्दृष्टी दृढवर्मा मित्रेणभिक्षयानीतकृतकारितादि दोष रहित प्रासुकं भोजनं कदाचिदेव गृणह्मस्मि।

उक्तं च- कुमारस्तदिनाञ्जनं सर्वसंगपराङ्मुखः।

ब्रह्मचार्यकवस्रोऽपि मुनिवत्तिष्ठते गृहे।।

बहुधानशनादितपः कुर्वन् सन् महाविरक्तमनाः पंचशतस्त्रीषु मध्ये निवसन्नपि असिधाराव्रतं पालितवान्। इत्थं चतुःषष्टिसहस्राणि वर्षाणि व्यतीत्य आयुरन्ते दिग्म्बरो मुनिभूत्वा समाधिना मृत्वा ब्रह्मोत्तरस्वर्गं दशसागरायुर्धारी विद्युन्मीलामा इंद्रो बभूव।

हिन्दी अनुवाद—अथ किसी समय राजभवन के निकट किसी से के घर में चारणऋद्धिधारी श्रुतकेवली ऐसे सागरचन्द्र नाम के मुनिराज आहार के

लिए पधारे। सेठ जी ने शुद्ध भावपूर्वक नवकोटी विशुद्ध प्रासुक आहार मुनिराज को दिया। ऋद्धिधारी मुनिराज को दान देने के माहात्म्य से सेठ के आंगन में आकाश से रत्नों की वृष्टि आदि पंच आश्चर्य होने लगे। उस समय जयजयकार शब्दों के द्वारा कोलाहल के फैल जाने पर राजभवन में स्थित शिवकुमार ने कौतुकपूर्वक बाहर देखा। अहो! मैंने किसी भव में इन मुनिराज का दर्शन किया है, ऐसा सोचते ही उसे तत्क्षण जाति स्मरण हो गया। पूर्व भव के ये बड़े भाई हैं, ऐसा निश्चित करके वह मुनिराज के पास आया और स्नेह के अतिरेक से मूर्च्छित हो गया। इस वृत्तांत को सुनकर चक्रवर्ती स्वयं वहाँ आकर पुत्र के मोह से व्याकुल होते हुए अत्यधिक विलाप करने लगे पिता के इस प्रकार के शोक को देखकर अत्यर्थ विरक्त भी कुमार ने जैसे-तैसे घर में रहना स्वीकार कर लिया और उसी दिन से ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते हुए यह शुद्ध सम्यग्दृष्टि अपने मित्र दृढवर्मा के द्वारा भिक्षा से लाए गए कृतकारित आदि दोषों से रहित शुद्ध भोजन को कभी-कभी गृहण करता था। कहा भी है-

उसी दिन से कुमार ने निश्चित ही सम्पूर्ण परिग्रह का त्याग करके एक वस्त्रधारी, ब्रह्मचारी होता हुआ मुनि के समान घर में रहता था। बहुत प्रकार के पक्ष-मास उपवास आदि रूप से अनशन आदि तपों को करते हुए महाविरक्तमना कुमार ने पाँच सौ स्त्रियों के बीच में रहते हुए असि भाराव्रत का पालन किया था। इस प्रकार से चौंसठ हजार वर्ष तक असिधाराव्रत का पालन करते हुए आयु के अंत में दिगम्बर मुनि होकर समाधिपूर्वक मरण करके ब्रह्मोत्तर नामक छठे स्वर्ग में दश सागर की आयु को प्राप्त करने वाला विद्युन्माली नाम का महान इन्द्र हो गया।

Shiv Kumar Follows the Vow of Celibacy

Once upon a time *Charanriddhidhari Shrutkevali* Sagarchandra Muniraj came for *Ahar* in the home of a Seth, who was residing near the palace of the king. Sethji offered pious-pure meals to Muniraj with hearty feelings. Five miraculous

events such as showering of jewels etc. from the sky in the courtyard of the palace of Sethji occurred as a consequence of giving *Ahar* to *Riddhidhari* Muniraj.

At that time, a great noise was originated due to the voices of *Jai-Jaikar*. Shivkumar in the royal palace saw outside listening to the noise. As he saw Muniraj, he felt that he had the darshan of the Muniraj in some previous birth and at the same moment, *Jatismaran* occurred to him. He knew that Muniraj was his elder brother in the previous birth. Knowing this, he came to Muniraj and due to excessive affection & love for him, he fainted down.

Listening to the whole event, Chakravarti himself came there and seeing the condition of his son Shivkumar, he started weeping. When Shivkumar became alert, he saw the condition of his father, the Emperor. Although Kumar was fully detached from the worldly pleasures, but seeing the attachment of his father, he somehow accepted to stay at home. He adopted full celibacy and became pure *Samyakdrishti*. He used to take meals sometimes only and those pure meals were used to be brought by his friend Dhiriverma avoiding the flaws of *Krit-Karit & Anumodna*. From that time, Kumar renounced all the possessions. He became single-clothed celibate. He used to live at home like a Muniraj. He used to perform a number of fasts & *vratas* of a week, month etc. He followed the vow of full celibacy living in between his five hundred wives for 64,000 years. At the end of his life, he became Digambar Muniraj and performed *Samadhi-Maran* (holy death) and so after death, he became a great Indra 'Vidyunmali' in the 6th heaven-Brahmottar with the lifetime of 10 Sagars.

जंबूकुमारस्य जन्म वैराग्यं च (जंबूकुमार जन्म एवं वैराग्य)

संस्कृत भाषा में—अस्ति श्रेणिकस्यानुशासने राजगृहे नगरेऽर्हदास श्रेष्ठी, तस्य धर्मपरायणा भार्या जिनमती। कदाचित् रात्रौ पश्चिमभागे सा जिनमती जम्बूवृक्षादिपंचसुस्वप्नान् अपश्यत्। प्रातः पत्या सार्धं जिनमंदिरे गत्वा त्रिज्ञान-धारिणो मुनेर्मुखारविन्दात् चरमशरीरिणः पुत्रस्य लाभो भविष्यतीति श्रुत्वा संतुष्टौ बभूवतुः। पूर्वोक्तो विद्युन्माली अहमिन्द्रचरो जीवः स्वर्गात् प्रच्युत्य जिनमत्यां गर्भे समागत्य नवमासानंतरं मानुषपर्यायं अलभत। फाल्गुनमासि शुक्लपक्षपूर्णिमायां प्रातः पुत्रजन्मोत्सवो बभूव। दानमाननृत्यगीतादिना सर्वत्र हर्षोल्लासोऽभवत् पितृभ्यां तस्य 'जंबूकुमार' इति नामकरणं कृतं बाल्यकाल एवासौ सर्व गुणकलासंपन्नः पवित्रमूर्तिः पुण्यात्मासीत्।

युवावस्थायां तस्य नगरस्य सागरदत्तादयः चत्वारः श्रेष्ठिनः स्व स्व-पुत्रीः जंबूकुमारेण साकं विवाहयितुं वाग्दानं चक्रुः। पद्मश्री-कनकश्री-विनयश्री-रूपश्री नामधेयास्ताः कन्याः सुरूपा नवयौवना आसन्। कदाचित् वसन्तऋतु-क्रीडायां जंबूकुमारः स्वबलेन मदोन्मत्त हस्तिनं वशीकृत्य सर्वत्र प्रशंसितो जातः।

एकदा रत्नचूलनामानं विद्याधरं युद्धात् विजित्य मृगांकराज्ञो विशालवती कन्यां अरक्षत्। राज्ञाश्रेणिकेन साकं तस्या विवाहो बभूव। युद्धक्षेत्रं विलोक्य जंबूकुमारस्य मनसि महत्या दयया साकं वैराग्यमभवत्।

हिन्दी अनुवाद—श्रेणिक महाराज द्वारा अनुशासित राजगृह नगर में अर्हदास नाम के सेठ रहते थे। उनकी धर्मपरायण जिनमती नाम की भार्या थीं। किसी समय रात्रि के पिछले भाग में जिनमती सेठानी ने जंबूवृक्षादि पंच उत्तम-उत्तम स्वप्न देखे प्रातःकाल अपने पतिदेव के साथ जिनमंदिर में जाकर तीनज्ञानधारी मुनिराज के मुखार विंद से चरम शरीरी पुत्र का तुम्हें लाभ होगा, ऐसा सुनकर दोनों जन बहुत ही संतुष्ट हुए। पूर्वोक्त विद्युन्माली नाम का अहमिन्द्रचर जीव स्वर्ग से च्युत होकर जिनमती के गर्भ में आये और नवमास के अनन्तर मनुष्य पर्याय को प्राप्त किया।

फाल्गुन मास की शुक्ल पक्ष की पूर्णिमा प्रातःकाल पुत्र का जन्म होने पर

उत्सव मनाया गया। दान, सन्मान, नृत्य गीत आदि के द्वारा सर्वत्र हर्षोल्लास का वातावरण हो गया। माता-पिता ने उस बालक का जंबूकुमार यह नामकरण किया। बचपन में वह कुमार सभी गुण और सभी कलाओं में विख्यात थे, पवित्रमूर्ति और पुण्यात्मा थे।

युवावस्था में प्रवेश करने पर उसी नगर के सागरदत्त आदि चार सेठों ने अपनी-अपनी पुत्रियों की जंबूकुमार के साथ ब्याह करने के लिए सगाई कर दी वे कन्याएँ पद्मश्री, कनकश्री विनयश्री और रूपश्री नाम वाली बहुत ही सुन्दर और नवयौवना थीं।

कदाचित् बसन्त ऋतु की क्रीड़ा में जम्बू कुमार ने अपनी शक्ति के बल से एक मन्दोन्मतः हाथी को वश में कर लिया, जिससे कि सर्वत्र प्रशंसा को प्राप्त हुए।

किसी समय रत्नचूल नाम के विद्याधर को युद्ध में जीत कर मृगांक नामक राजा की विशालवती कन्या की रक्षा की और राजा श्रेणिक के साथ उस कन्या का विवाह हो गया। अनन्तर युद्ध क्षेत्र को देखकर जंबूकुमार के मन में महती दया के साथ साथ ही वैराग्य उत्पन्न हो गया।

The Birth of Jambukumar & His Detachment

A Seth named Arhddas was living at Rajgriha Nagar, ruled over by Shrenik Maharaj. His wife was Jinmati, the religious minded lady.

At some time, Jinmati saw five auspicious dreams like *Jambu Vriksha* etc. in the last phase of the night. In the morning, she went to *Jinmandir* with his husband. There they knew from Muniraj having 3 types of *Gyan (Mati, Shrut, Avadhi)* that they will be blessed with *Charamshariri* (who will be salvated from this birth) son. Knowing this, both of them were very happy & satisfied. The *Jeev* (soul) of Vidyunmali Indra, described earlier, came into the womb of Jinmati after completing the lifetime of heaven & after nine months, he was born to the fortunate couple.

The son was born in the morning of the *Poornima* of the bright half (*Shukla Paksha*) of the month of the Falgun. A great festival was organized. All the atmosphere was filled with happiness by auspicious dances-music, donations, felicitations etc. The parents named the child as 'Jambukumar'. The pious son was well-versed in all the good qualities, virtues & various arts since his childhood.

When Jambukumar became young, the Seth of the city 'Sagardutt' engaged him for marriage with his four daughters-Padmashri, Kanakshri, Vinayshri & Roopshri, who were quite beautiful & young.

Sometime Jambukumar overpowered a mad elephant during the play of spring season with his physical strength and so he was praised all over.

Later he protected the girl Vishalvati, the daughter of the king Mrigank by defeating Ratnachool *Vidyadhar* in the battle. Vishalvati was married to king Shrenik. However seeing the battle-field, Jambukumar had the feelings of a lot of sympathy & renunciation of the world.

जंबूकुमारस्य जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहणं मुक्तिगमनं च (जंबूकुमार का दीक्षा ग्रहण एवं मोक्ष गमन)

संस्कृत भाषा में—राजगृहस्य उद्याने पंचशतशिष्यैर्वेष्टितः सुधर्माचार्यवर्यः समायातः। जंबूकुमारः तत्र गत्वा नमस्कृत्य स्तुत्यादिना पूजयित्वा पूर्वजन्म वृत्तं च श्रुत्वा निर्ग्रन्थदीक्षां याचितवान्। आचार्यवर्यैरुक्तं यत् त्वं गृहे गत्वा पित्रोराज्ञां गृहीत्वा क्षांत्वा क्षमयित्वा चागच्छ, तदा दीक्षां दास्यामि। इत्थं गुरुवाक्यमनुसृत्यानिच्छयैव कुमारो गृहं गत्वा पित्रोर्निवेदितं वृत्तं। मोहमाहृत्येन पितृभ्यां येन केन प्रकारेण तत्क्षणं एव चतसृभिः कन्याभिः साकं विवाहः कारितः, रात्रौ चैकस्मिन् भवने चतसृभिः नवौढापत्नीभिः सह निवसन्नपि

कुमारोऽलिप्तः सन् वैराग्यवर्धककथानकोपकथानकैः समयं नीतवान्।

अस्मिन् प्रसंगे सचिंतिता माता जिनमती पुनः पुनः जंबूकुमारस्य भवनस्य पार्श्वे भ्रमन्ती आसीत्, यत् कुमारः पत्नीषु मुग्धो जातो न वा तदानीमेव विद्वरनामा चौरः चोरयितुं तद्भवने आगत्य कुमारस्य वैराग्यं ज्ञात्वा जिनमत्या आग्रहेण बहुप्रकारेण प्रयत्नं कृतवान्। किन्तु कुमारस्तु सर्वानपि उपेक्ष्य प्रभाते एव गुरोः सकाशे गत्वा दीक्षितो जातः, तदा विद्युच्चरचौरोऽपि पंचशततस्करैः सह दिगम्बरो बभूव, पितार्हदासोपि दीक्षां गृहीतवान् माता जिनमत्यपि चतसृभिर्वधूभिः सह सुप्रभार्यिकाया पार्श्वे आर्यिकाः संजाताः। सुधर्माचार्यस्य मुक्तौ गते सति जंबूस्वामी अनुबद्ध केवली बभूव अस्य सिद्धिगते सति कश्चित् केवली न बभूव।

धन्योऽयं जंबूस्वामी प्राक्तनभवेऽसिधाराव्रतं अनुपाल्यास्मिन् भवे नवोढाभार्यासु अनासक्तः, सन् पूर्णब्रह्मचर्यव्रतमनुपाल्य मुक्तिलक्ष्यामासक्तो बभूव, नमस्तस्मै पुनः पुनः भूयात्।

इति श्री जम्बूस्वामी चरितं।

हिन्दी अनुवाद—राजगृही नगरी के उपवन में अपने पाँच सौ शिष्यों से सहित श्री सुधर्माचार्य वर्य पधारे। जंबूकुमार वहाँ पहुँचे उन्हें नमस्कार कर स्तुति आदि के द्वारा उनकी रक्षा करके और उनसे पूर्व जन्म के वृत्तांत को सुनकर जैनेश्वरी दीक्षा की याचना की। आचार्यश्री ने कहा कि तुम घर में जाकर माता-पिता की आज्ञा लेकर क्षमा करके और क्षमा कराके आवो तब मैं दीक्षा दूँगा। (क्यों यह सनातन परम्परा है) इस प्रकार गुरु के वचन के अनुरूप बिना इच्छा के ही कुमार ने घर जाकर माता-पिता से दीक्षा की बात कह दी। मोह के माहात्म्य से माता-पिता ने जिस तिस किसी प्रकार से उसी दिन ही जिन से सगाई हुई थी उन चारों कन्याओं के साथ ब्याह करा दिया और उसी रात्री में एक कमरे में चारों ही नव विवाहित पत्नियों के साथ बैठे हुए थे। कुमार उन स्त्रियों से अलिप्त रहते हुए वैराग्य की बढ़ाने वाली कथाओं से रात्रि बिताने लगे।

इसी बीच अत्यन्त चिंतित हुई माता जिनमती बार-बार जंबूकुमार के कमरे के पास घूम रही थी, कि कुमार इन स्त्रियों में आसक्त होता है या नहीं ? उसी समय विद्युच्चर नाम का चोर चोरी करने के लिए उस भवन में आया

था। इस घटना को जानकर माता जिनमती के आग्रह से वह चोर बहुत प्रकार के उपायों से जंबूकुमार को घर में रहने के लिए समझाने लगा। किन्तु कुमार ने सभी उपेक्षा करके प्रातःकाल ही गुरु के पास पहुँचकर जैनेश्वरी दीक्षा ले ली, उस समय विद्युच्चर चोर भी अपने पाँच सौ साथियों के साथ दीक्षित हो गया, पिता अर्हदास ने भी दीक्षा ले ली। माता जिनमती ने भी अपनी चारों बहुओं के साथ सुप्रभा आर्यिका के समीप आर्यिका दीक्षा ले ली। जिस दिन सुधर्माचार्य गुरु मुक्ति को प्राप्त हुए हैं, उसी दिन जंबूस्वामी को केवलज्ञान प्रगट हो गया, इसीलिए जम्बूद्वीप अनुबद्ध केवली कहलाये हैं। जंबूस्वामी के मोक्ष जाने पर उस दिन कोई केवली नहीं हुए हैं।

धन्य है ये जंबूस्वामी जिन्होंने पूर्वभव में असिधारा व्रत का अनुष्ठान करके इस भव में तत्काल विवाही हुई नवीन पत्नियों में सर्वथा अनासक्त होते हुए अखण्ड ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करके मुक्ति लक्ष्मी में आसक्त हो गये, उन्हें मेरा बारम्बार नमस्कार होवे।

इस प्रकार अति संक्षेप में श्री जम्बूस्वामी चरित पूर्ण हुआ।

The Initiation & Salvation of Jambu Swami

Shri Sudharmacharya along with his 500 disciples came to the garden of Rajgrahi Nagari. Jambukumar reached there, greeted the Acharya Maharaj with great devotion, worshipped him and after listening the story of his previous births, he prayed him for getting *Jaineshwari Deeksha*. Acharya Shri told him to go to his parents first to get their permission and for mutual forgiveness with them because it is the eternal tradition.

Jambukumar unwillingly went to his parents obeying the order of the Preceptor & told them about his wish of getting initiated. The parents could-not accept this truth because of their utmost attachment with their son and so they somehow married Jambukumar on the same day with the four girls, with whom he had been engaged. In the night Jambukumar remained fully de-

tached from the worldly pleasures and started passing the night in telling the stories of renunciation to all the four newly married wives in the room.

At that time, the mother of Jambukumar was wandering outside the room with the anxiousness that whether Jambukumar is attracted towards the wives or not. In the meantime a thief named Vidyuchchar came there with the purpose of committing theft. Knowing all the event, Vidyuchchar started persuing Jambukumar with various tricks to stay at home only, on the prayer of mother Jinmati.

But Jambukumar remained fully unperturbed and as the Sun rose, he reached near Shri Saudharmacharya and took Jaineshwari Deeksha. At that time, Vidyuchchar thief along with his 500 companions, father of Jambukumar 'Arhddas', mother 'Jinmati' along with four newly-wed wives of Jambukumar, also accepted Jaineshwari Deeksha. Jinmati and other ladies were initiated by Suprabha Aryika.

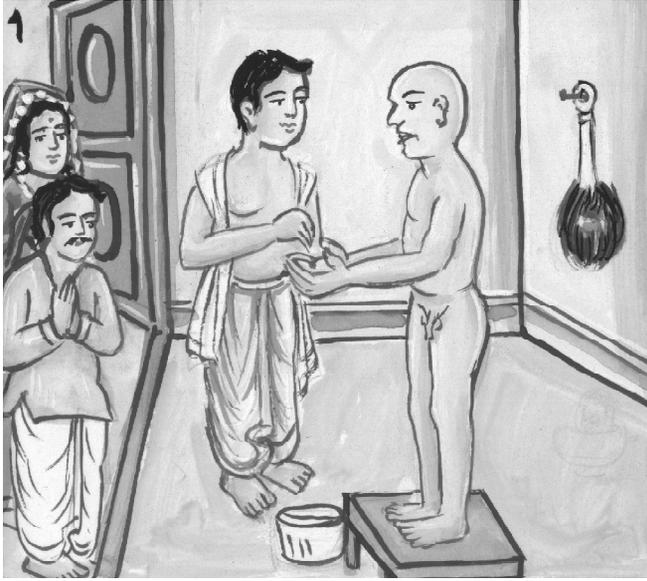
With hard penance Jambuswami Muniraj attained Omniscience (*Kevalgyan*) on the same day when Shri Sudharmacharya got salvated i.e. attained Nirvan. So Jambuswami was called as *Anubaddha Kevali*. When Jambuswami got Nirvan, no other Muniraj could attain *Kevalgyan* on that day.

I pay my great reverence again & again in the holy feet of Jambuswami, who followed the vow of celibacy in the previous birth and in the present birth also, he remained fully detached from the newly-wed wives to follow strict celibacy and to be attached with Moksha-Laxhmi i.e. to get salvation.

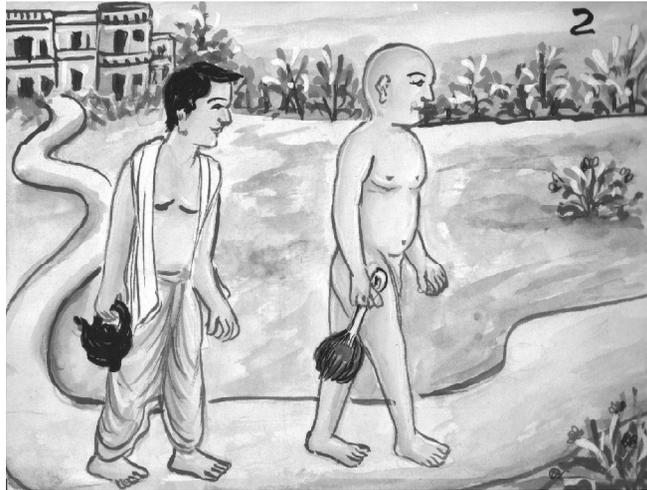
Thus it completes the story of Shri Jambuswami in Short.



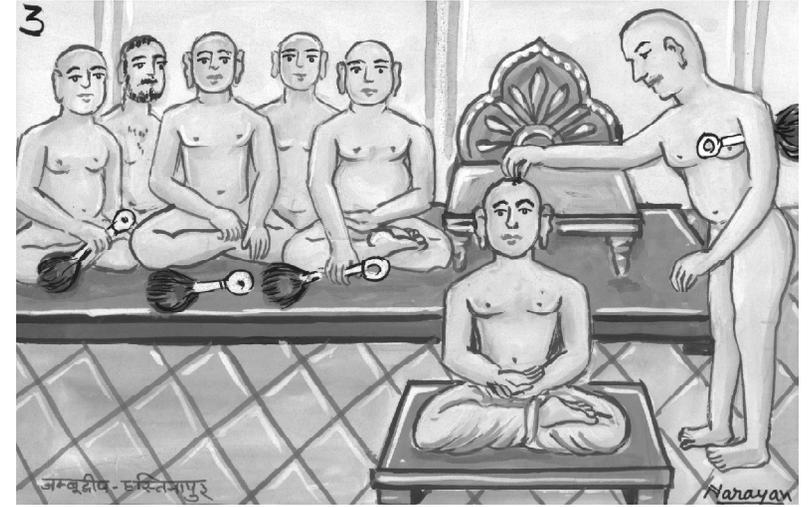
जम्बूस्वामी के पूर्वभव एवं वैराग्य के दृश्य



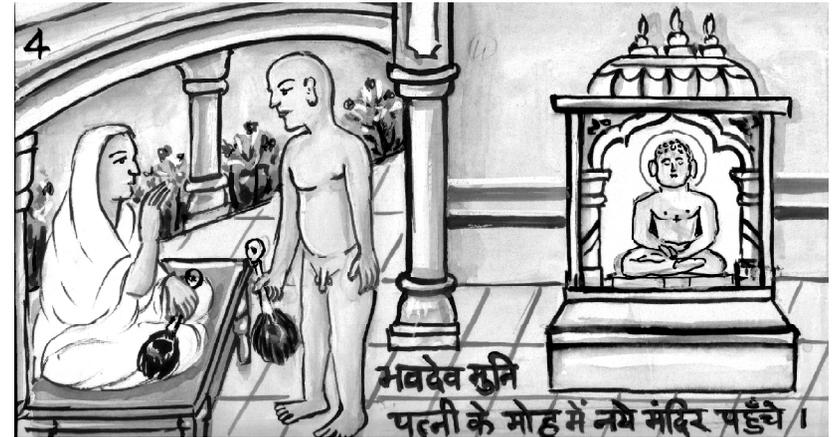
1 भावदेव मुनि अपने भाई भवदेव के घर आहार करते हुए



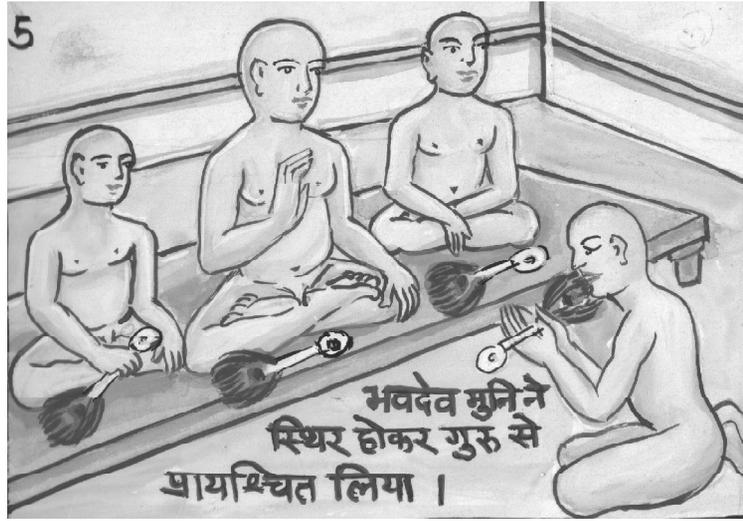
2 भावदेव मुनि भवदेव भाई के साथ आचार्य संघ में जाते हुए



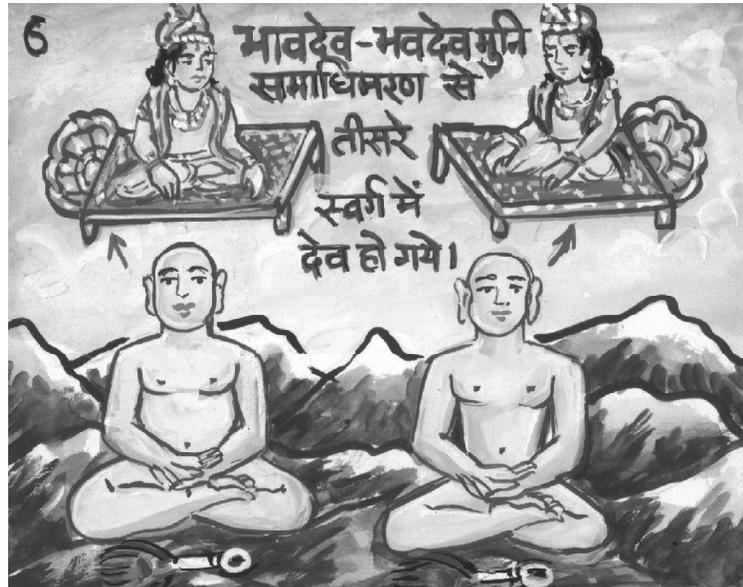
3 भावदेव मुनि द्वारा छोटे भाई को दीक्षा दिलाना



4 भावदेव मुनि पत्नी के मोह में नये मंदिर पहुँचे एवं उनकी पत्नी आर्थिका ने उन्हें विचलित देख उपदेश दिया



5 भवदेव मुनि ने स्थिर होकर गुरु से प्रायश्चित्त लिया



6 भावदेव-भवदेव मुनि समाधिमरण से तीसरे स्वर्ग में देव हो गये



7a दोनों देव स्वर्ग में भगवान का अभिषेक-पूजन करते हुए



7b दोनों देव ध्यानपूर्वक स्वर्ग से च्युत हुये



8 भावदेव का जीव विदेह क्षेत्र में राजा वज्रदंत का पुत्र सागरचंद्र हुआ



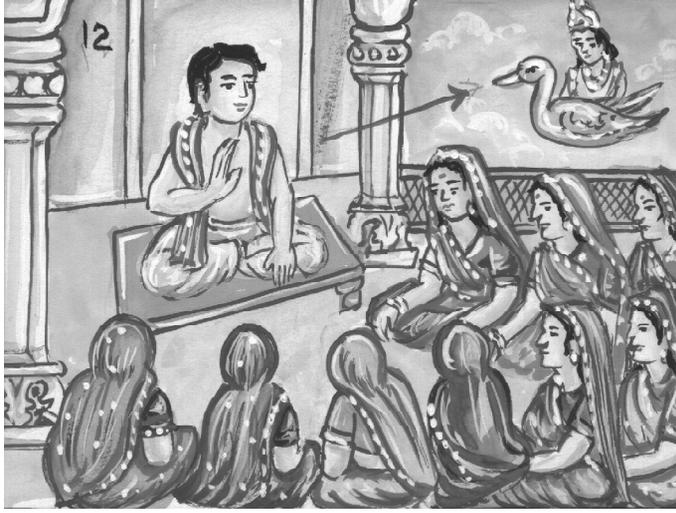
9 भावदेव का जीव विदेह की वीतशोकापुरी में महापद्मचक्री का पुत्र शिवकुमार हुआ



10 सागरचंद्र मुनि के आहार में देव दुंदुभि सुनकर शिवकुमार राजकुमार मूर्छित हो गये



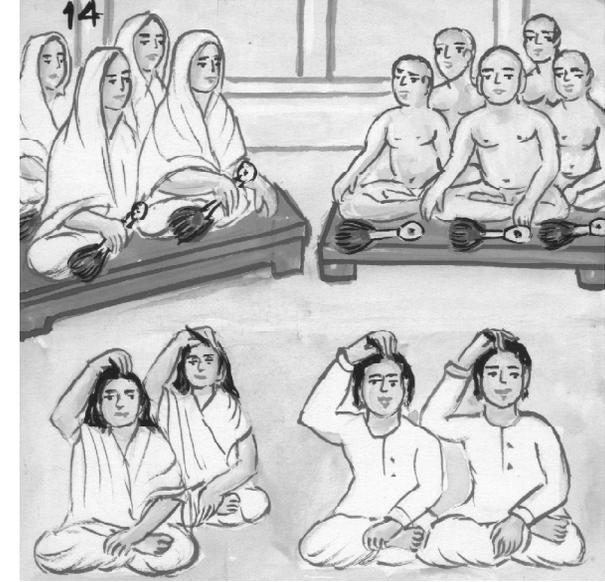
11 चक्रवर्ती ने पुत्र शिवकुमार को दीक्षा लेने से रोका



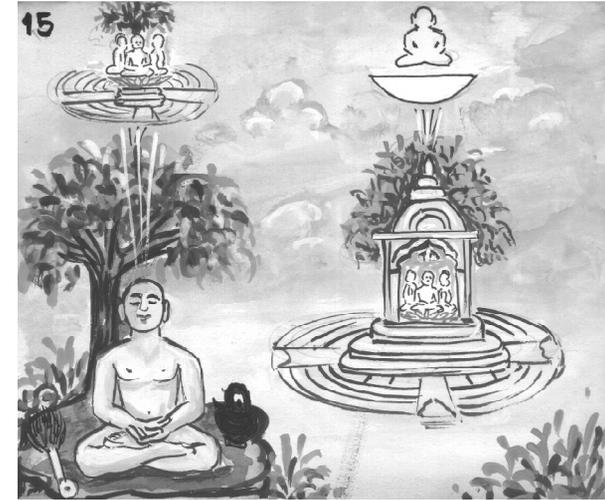
- 12 शिवकुमार ब्रह्मचारी होकर 500 स्त्रियों के बीच हजारों वर्ष तक असिधारा व्रत पालते रहे एवं समाधिपूर्वक छठे स्वर्ग गये



- 13 शिवकुमार का जीव स्वर्ग से आकर जंबूकुमार हुआ।
माता-पिता ने जबरदस्ती चार कन्याओं से विवाह कर दिया, रात्रि भर राग-विराग की चर्चा हुई। माता चिंघित थी-विद्युच्चर चोर ने भी समझाया



- 14 किन्तु जंबूकुमार ने प्रातः ही दीक्षा ले ली।
तभी उनके माता-पिता, चारों पत्नी व अनेक चेरों ने भी दीक्षा ले ली



- 15 जंबूस्वामी मुनि बनकर केवलज्ञानी हो गये,
ये अंतिम अनुबद्ध केवली हुये हैं।